38.0 मूल्यपरक शिक्षा की अवधारणा तथा वर्तमान समय में इसकी प्रासंगिकता

- **रश्मि साहू,** शोधार्थी, शिक्षाशास्त्र विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार
  Email: rs6359308@gmail.com
- **डॉ प्रिज्मा झरे,** सहायक प्रध्यापक, शिक्षाशास्त्र विभाग, देव संस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार

शोध-सार

मूल्यों की श्रेष्ठता निर्धारित कने में तथा उन्हें आत्मसात् करने में शिक्षा का बहुत बड़ा योगदान है। मूल्य से तात्पर्य है एक सामान्य नामकरण चयन होने की गुणशीलता का है। मूल्य सम्बन्धी धारणा प्रयोगवादी मूल्यों को रुचि उद्देश्य या समस्या हल से सम्बन्धित मानते है। मूल्यों के सम्बन्ध में संवेगात्मक सिद्धान्त भी प्रतिपादित किया जाता हे, जो यह संकेत देता है कि मूल्य हमारी अभिवृत्ति या भावना द्वारा निर्धारित होते है। मूल्यों को कई भागों में विभाजित किया किया गया जो मुख्यतः इस प्रकार हैं- आर्थिक मूल्य, स्वास्थ्य सम्बन्धी मूल्य, सामाजिक मूल्य, नैतिक मूल्य, बौद्धिक मूल्य, सौन्दर्यानुभूति मूल्य। मूल्य निर्धारित शिक्षा की आवश्यकता इसलिए है कि हम उन मूल्यों को प्राथमिकता देना सीख लें जो मानव कल्याण के दृष्टिकोण से सबसे अधिक मूल्यवान हैं। ऐसी शिक्षा सब धर्मों से अच्छे मूल्यों को संकलित करके उनको विद्यार्थियों को सीखाती है।

मुख्य शब्दः *मूल्यपरक शिक्षा, शिक्षा, विद्या*

प्रस्तावना

शाब्दिक रुप में मूल्य का अर्थ है- उपयोगिता, वांछनीयता, महत्व। दर्शन की भाषा में मनुष्य के जीवन के प्रति दृष्टिकोण को, धर्मशास्त्र में नैतिक नियमों को, मानवशास्त्र में सांस्कृतिक लक्षणों को, समाजशास्त्र में समाज के विश्वास, आदर्श, सिद्धान्त और सामाजिक मानदण्डों को मूल्य से सम्बोधित किया जाता है। इस प्रकार से जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में मूल्य हमारे समक्ष एक अलग स्वरुप में उपस्थित होते हैं। फ्लिंक महोदय के अनुसार, मूल्य मानक रुपी मानदण्ड हैं जिनके आधार पर मनुष्य अपने सामने उपस्थित क्रिया विकल्पों में से चयन करने में प्रभावित होते हैं। मूल्य एक सामान्य और अमूर्त गुण है जो किसी वस्तु में निहित होता है और उसके महत्व या गुरुत्व की ओर संकेत करता है। मूल्य मानव अस्तित्व में किसी महत्वपूर्ण धारणा अथवा स्थिति का प्रतिनिधित्व करते हैं। मनुष्य जीवन पर्यन्त सीखता रहता है तथा उसके अनुभवों में निरन्तर अभिवृद्धि होती रहती है। जैसे जैसे वह अधिकाधिक सीखता जाता है व परिपक्व होता जाता है वो ऐसे अनुभव प्राप्त करता है जो उसके व्यवहार को निर्देशित करते हैं। ये निर्देशक तत्व उसके जीवन को दिशा प्रदान करते हैं और इन्हें ही मूल्य कहा जाता है। मूल्य वो सिद्धान्त अथवा मानक होते हैं जो जीवन की गुणवत्ता को अधिक बेहतर बनाते हैं। मूल्य बताते हैं कि कौन सा व्यवहार करने योग्य है और कौन सा व्यवहार करने योग्य नही है। मूल्य चरित्र निर्माण तथा व्यक्तित्व विकास को आधार प्रदान करते हैं। जो मूल्य आन्तरिक होते हैं जैसे प्रेम, सहिष्णुता, सहनशीलता, करूणा, तदनुभूति आदि वाह्य मूल्यों को आधार प्रदान करते हैं जैसे ईमानदारी, अनुशासन, निष्ठा आदि।

मूल्य किसी वस्तु या स्थिति का वह गुण है जो समालोचना व वरीयता को प्रकट करता है। यह एक आदर्श इच्छा है जिसे पूरा करने के लिए व्यक्ति आजीवन प्रयास करता है। मूल्य एक नही अपितु विविध होते है और सभी व्यक्तियों के लिए विभिन्न मूल्यों के महत्व में अन्तर होता है। किसी एक व्यक्ति के लिए एक मूल्य अन्य मूल्यों से अधिक या कम महत्वपूर्ण हो सकता है, जबकि कुछ लोग मूल्यों की निरपेक्ष व शाश्वत प्रकृति में विश्वास रखते हैं तथा उनके अनुसार कुछ मूल्य पूरे विश्व में सर्वत्र एवं सभी कालों में वांछनीय होते हैं। उनके अनुसार मनुष्यों के कुछ कार्य स्वभावतः बुरे या दोषपूर्ण होते हैं, जबकि कुछ मानव कार्य प्रत्येक परिस्थिति में सदैव ही सही होते हैं। जैसे जरुरतमन्द लोगों की सहायता करना सार्वभौमिक रुप से अच्छा कार्य है, जबकि हत्या या अनाचार करना सभी लोगों द्वारा निन्दनीय है। किसी भी व्यक्ति द्वारा एक भी अपवाद खोज लेने पर मूल्य प्रतिमान की निरपेक्ष स्थिति समाप्त

हो जाती है। सापेक्षतावादियो के मतानुसार, मूल्य स्थितियों में अनेकता सम्भव है, उनके अनुसार मूल्य निर्णयों से हमें एक व्यक्ति के वरीयता प्राप्त विचारो व कार्यों का पता चलता है। युग परिवर्तन के साथ-साथ मूल्य भी परिवर्तित होते रहते हैं। वर्तमान वैज्ञानिक व प्रौद्योगिकी प्रधान युग में शिक्षा के प्रचार-प्रसार के फलस्वरूप भी जीवन के मूल्यों में ह्रास दिखाई दे रहा है। मूल्य आधारित जीवन शैली की जरुरत को ध्यान में रखते हुए यह आवश्यक है कि विद्यालयों में मूल्यों के विकास हेतु विशिष्ट व संगठित प्रयत्न किए जायें। वास्तव में मूल्य सामाजिक उत्पाद हैं तथा विभिन्न संस्थाएँ पीढ़ी दर पीढ़ी कुछ मूल्यों को स्थानान्तरित करने व संरक्षित रखने हेतु प्रयास करती रही हैं।

मूल्य का अर्थ और परिभाषा: Value (वैल्यू) शब्द की उत्पत्ति Valere शब्द से मानी जाती है जो किसी वस्तु की कीमत या उपयोगिता को व्यक्त करता हैं मूल्य एक प्रकार का मानक है। मनुष्य किसी वस्तु क्रिया विचार को अपनाने के पूर्व यह निर्णय करता है कि वह उसे अपनाये या त्याग दे। जब ऐसा विचार व्यक्ति के मन में निर्णयात्मक ढंग से आता है तो वह मूल्य कहलाता हैं, मूल्य और अदर्श ये दोनो ही चरित्र निर्माण तथा व्यक्तित्व विकास के दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

सी. बी. गुड के अनुसार मूल्य वह चारित्रिक विशेषता है जो मनोवैज्ञानिक सामाजिक और सौन्दर्यबोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है। ऑलपोर्ट के अनुसार व्यक्ति की रुचि का सापेक्षिक महत्व तथा व्यक्ति की प्रबल इच्छा मूल्य कहलाती है। ऑक्सफोर्ड अंग्रेजी शब्दकोष में मूल्य को महत्ता उपयोगिता वांछनीयता तथा उन गुणों के रुप मे परिभाषित किया गया है जिन पर ये निर्भर है। मिल्टन का मानना है जीवन मूल्य ओस की बूँदों के सदृश्य नहीं है जो मौसम के अनुसार दिखाई दे इनकी जड़े प्रत्येक प्रणाली में बहुत गहरी होती है तथा इनका वास्तिविकता से घनिष्ट संबंध हैं।

विभिन्न दार्शनिकों की दृष्टि में शिक्षा

प्लेटो के अनुसार ‘‘शिक्षा प्रथम तथा श्रेष्ठतम वस्तु है जिसे सर्वोत्तम मनूष्य ही प्रापत कर सकते हैं।’ रुसो का कथन है ‘‘सच्ची शिक्षा वह है जो व्यक्ति के अन्दर प्रस्फुटित होती है, यह व्यक्ति की अन्तर्निहित शक्तियों की अभिव्यक्ति है।’’ कामेनियस शिक्षा को इया शाश्वतता की प्राप्ति का साधन मानता है क्योंकि मानव जीवन का परम लक्ष्य ईश्वर की प्राप्ति है। परन्तु वह ईश्वर की प्राप्ति में सांसारिक तथ्यों को प्रथम सीढ़ी मानता है इस कारण उसकी शिक्षा सांसाररिक एवं आध्यात्मिक सुखों की प्राप्ति का एक साधन है।’’

स्वामी विवकानंद के अनुसार - शिक्षा की व्याख्यया शक्ति के विकास के रुप में की जा सकती है। महात्मा गांधी का कहना था कि शिक्षा से मेरा अभिप्राय है - बालक और मनुष्य के शरीर मस्तिष्क और आत्मा में पाये जाने वाले सर्वोत्तम गुणों का चतुर्मुखी विकास। रवीन्द्र नाथ टैगोर ने शिक्षा शब्द का प्रयोग व्यापक अर्थ में किया है। उहोंने अपनी पुस्तक में लिखा है ‘‘सर्वोच्च शिक्षा वही है जो सम्पूर्ण सृष्टि से हमारे जीवन का सामंजस्य स्थापित करती है। श्री अरविन्द घोष का कथन है सच्ची और वास्तविक शिक्षा केवल वही है जो मानव की अन्तर्निहित समस्त शक्तियों को इस प्रकार विकसित करती है कि वह उनसे पूर्ण रुप से लाभान्वित होता है।’’ स्वामी दयानंद ने लिखा है कि ‘‘शिक्षा वह है जिससे मनुष्य विद्या आदि शुभ गुणों को प्राप्त करे और अविद्या आदि दोषों का त्याग कर सदैव आनंदमय जीवन व्यतीत कर सके।

डॉ. राधाकृष्णन ने शिक्षा को जीवन के लिए आवश्यक माना है परन्तु उन्होंने जीवन के आध्यात्मिक पक्ष के विकास के लिए ही इसको अधिक महत्व दिया है। शिक्षा को ज्ञान तथ कौशल के विकास के लिए आवश्यक नही मानते वरन् उन्होंने शिक्षा को जीवन यापन की कला में दीक्षित करने के लिए भी अनिवार्य माना है। उनके अनुसार हम शिक्षक से सीखते हैं स्वयं सीखते हैं तथ जीवन एवं उसके अनुभवों से भी सीखते हैं। शिक्षा वस्तुतः एक औपचारिक अवधारण या प्रत्यय नहीं है वरन् सम्पूर्ण जीवन का अनुभव है। इस प्रकार वह शिक्षा है। डॉ. राधाकुष्णन जीवन को शिक्षा के रुप में देखते है।

पं. मदन मोहन मालवीय जी शिक्षा को मुक्ति का साधन मानते हैं जिसे मानव के सभी प्रकार के बन्धनों- आर्थिक, सामाजिक राजनैतिक, धार्मिक आदि से छुटकारा मिल सकता है। डॉ एनीबेसेन्ट ने शिक्षा के सबंध में अपना अभिमत प्रकट करते हुए कहा है- बालक में अंतर्निहित उन समस्त शक्तियों का विकास करना जिन्हें वह अपने साथ लेकर आता है, शिक्षा है।

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जी के अनुसार ‘‘ज्ञान के दो अंग हैं एक शिक्षा तथा दूसारा विद्या। जो कॉलेजों में पढ़ाई जाती हे जिसे पढ़ कर लोग ग्रेजुएट, क्लर्क, डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, प्रोफेसर आदि बनते है, जीवकोपार्जन एवं लोक व्यवहार में निपुणता प्राप्त करने के लिए है। यह आवश्यक है क्योंकि इसके बिना संसारिक जीवन में स्थिरता और उन्नति का मार्ग नहीं खुलता इसे शिक्षा कहते हैं पर इससे भी अधिक आवश्यक विद्या है। जिस ज्ञान को प्रापत कर मनुष्य अपनी मान्यताओं आकांक्षाओं भावनाओं आदर्शों का निर्माण करते हैं इसी को विद्या कहते हैं। यह सत्संग सतसाहित्य सज्जनों के अभिवचन सुनने तथा क्रियाकलाप देखने से विद्या का आविर्भाव होता हैं। अतः शिक्षा एवं विद्या दोनों का जीवन में महत्वपूर्ण स्थान हैं।

मूल्यपरक शिक्षा की अवधारणा

जीवन में सफलता का आधार वस्तुतः शिक्षा में ही निहित है। समय के साथ-साथ शिक्षा के उद्देश्य भी परिवर्तित होते रहते हैं। शिक्षा द्वारा विकल्पों में से उत्तम विकल्प को चयन करने की कुशलता ही मनुष्य में विकसित होनी चाहिए और उत्तम विकल्प के चयन करने की प्रक्रिया ही वास्तव में मूल्य प्रक्रिया कहलाती है। पूर्ण शिक्षा द्वारा विकसित किये जाने वाले मूल्यो के विषय में हमारे धर्माचार्यों, शिक्षाविदों, मनोवैज्ञानिकों, दार्शनिकों, शिक्षकों व अभिभावकों में आज भी मतैक्य नहीं है। किसी भी प्रकार की शिक्षा व्यवस्था मूल्य विहीन नहीं हो सकती है। मूल्यपरक शिक्षा का अभिप्राय मुख्यतः ऐसी शिक्षा प्रणाली से माना जा चाहिए जो मनुष्य निर्माण की कार्यशाला के रूप में मनुष्य में उचित मूल्यों का सृजन करते हुए उसके व्यक्तित्व को विकसित करने का कार्य करती है। मूल्यपरक शिक्षा एक व्यापक प्रत्यय है जिसे मात्र विद्यालयी शिक्षा के सूत्र में औपचारिक रूप से नहीं बाँधा जा सकता है। सामान्य शब्दों में मनुष्य में मूल्यों का सृजन करने वाली शिक्षा मूल्यपरक शिक्षा कहलाती है जो जीवन की सर्वोच्चता की ओर मनुष्य को अग्रसर करने का कार्य करती है।

सा विद्या या विमुक्तये

अर्थात् विद्या वह है जिसे प्राप्त करने से मनुष्य को मोक्ष या मुक्ति मिल जाए। यह विद्या का सार्वभौम रूप है जो समूचे अस्तित्व को ही उन्नत करता है। वास्तव में भारतीय आदर्शवादी पृष्ठभूमि द्वारा प्रदान किया गया यह अभिप्राय हमें मूल्यपरक शिक्षा का अर्थ स्पष्ट करने में समर्थ है। मूल्यपरक शिक्षा के प्रत्यय को गूढ़ रूप में उक्त सूक्ति द्वारा भी समझा जा सकता है श्विद्या ददाति विनयं, विनयात् ददाति पात्रताम्श्। जीवन की कोई भी सफलता सार्थक एवं स्थायी तभी हो सकती जब इसकी नींव मजबूत मूल्यों पर रखी गयी हो, इसी प्रकार मनुष्य का निर्माण करने में भी शिक्षा तभी सफल हो सकती है जब उसे मूल्योन्मुख अथवा मूल्यपरक बनाया जायेगा।

वर्तमान समय में मूल्यपरक शिक्षा की प्रासंगिकता

वर्तमान आधुनिकीकरण के परिदृश्य में सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों का खण्डन हो रहा है, शक्ति एवं ज्ञान का दुरुपयोग हो रहा है, ऐसे समय में मात्र मूल्योन्मुख शिक्षा ही वैयक्तिक-हित, सामाजिक-हित, प्रेम, शान्ति, सद्भावना तथा विवेक को विकसित कर सकती है। आज ज्ञान की वृद्धि तो की जा रही है परन्तु इसके साथ नैतिकता पिछड़ती ही जा रही है। सत्य, न्याय, अहिंसा इत्यादि ऐसे ही कुछ नैतिक मूल्य हैं जो मानवता के घावों पर मरहम का काम कर सकते हैं। मूल्योन्मुख शिक्षा ही मनुष्य को प्रेरित कर सकती है कि वह अणु-शक्ति का प्रयोग मानवता के विनाश के लिए नहीं बल्कि मानवता की भलाई के लिए करे। मूल्योन्मुख शिक्षा चारित्रिक एवं नैतिक विकास की बुनियाद है, यह संस्कृति को सुरक्षित रखती है और उसे सुदृढ़ बनाती है। जीवन मूल्य अलंकारो के समान व्यक्ति के जीवन में चमकते हैं अतः यह अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है कि शिक्षा द्वारा व्यक्ति में

जीवन मूल्यों का निर्माण एवं विकास किया जाए। पिछले तीन दशकों में शिक्षा के संख्यात्मक प्रसार पर ही ध्यान केन्द्रित रहा है परिणामस्वरूप शिक्षा के स्तर व गुणात्मक स्वरूप पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। ऐसी शिक्षा पद्धति से केवल शिक्षा का स्तर ही नहीं गिरा अपितु नैतिक मूल्यों का भी पतन हुआ है। मूल्योन्मुख शिक्षा की आवश्यकता पर बल देते हुए रवीन्द्रनाथ टैगोर जी ने भी कहा है शिशक्षा की महान उपयोगिता केवल तथ्य एकत्र करने में नहीं है अपितु मनुष्य को जानने में निहित है और मनुष्य को इस योग्य बनाने में है कि वह स्वयं को पहचान सके।

डॉ0 राधाकृष्णन के शब्दों में शिक्षा केवल सूचनाएँ प्रदान करने या कौशलों के प्रशिक्षण तक ही सीमित नहीं है इसे शिक्षितों को मूल्यों की उचित भावना प्रदान करनी होगी।श् हमें अपनी सफलता पर गर्व है परन्तु जिस द्रुत गति से हम अपने शाश्वत मूल्यों में अपनी आस्था खोते जा रहे हैं तथा तात्कालिक जीवन को सुखी बनाने हेतु जी-तोड़ मेहनत व प्रयत्न कर रहे हैं, वह एक असुरक्षित भविष्य का द्योतक भी है। हमारे शिक्षक, अभिभावक, राजनैतिक दलों के सदस्य, अधिकारी व कर्मचारी सभी मूल्य संकट के दौर से गुजर रहे हैं। सभी लोग मूल्य अन्तर्द्वन्द्व में फंसे नजर आते हैं। यद्यपि हमें निराशावादी नहीं होना चाहिए तथापि हमें ऐसा अनुभव होता है मानो इक्कीसवीं शताब्दी का भविष्य अन्धकारमय है। जिस गति से मनुष्य जैसे जीवन्त प्राणी की मूल्यों में आस्था डगमगा रही है या समाप्त हो रही है उससे ऐसा प्रतीत होता है कि एक दशक के बाद ही लोगों का मूल्यों में विश्वास उठ जाएगा और समाज में नैतिकता का भी अन्त हो जाएगा। आज बुद्धिजीवी भी अपने संकुचित सुरक्षित निवासों में पलायन के लिए सचेष्ट हैं अथवा अलग-थलग पड़ गये हैं। गम्भीर विद्यार्थी स्वयं को विरोधों व भ्रमों में महसूस कर रहे हैं, दोहरे नैतिक मानदण्ड आज के जीवन के घटक बन गये हैं, अनेक लोगों को अपना जीवन भार सदृश लगता है, मूल्यो पर अहंवादिता एवं स्वार्थपरकता के रोगाणुओं ने आक्रमण कर दिया है। आज का मानव पश्चिमी उपभोक्ता संस्कृति का पोषक बन बैठा है, उसने व्यावसायिक मानव का स्वरूप ग्रहण कर लिया है तथा अब वह कर्त्तव्य प्रधान आस्था वाली भारतीय संस्कृति का प्रतिनिधि नहीं बनना चाहता है। सभी स्टेट्स सिम्बल के चक्रव्यूह में फंसे हुए दिखाई देते हैं। दूरदर्शन व वीडियो लगातार महाभारत के चक्रव्यूह में जयद्रथ की भूमिका का निर्वाह कर रहे हैं। भारतीयता अनैतिकता के माहौल में दम तोड़ रही है, जबकि वास्तविकता यह है कि इन्द्रिय सुख आधारित सम्पन्नतावादी दृष्टिकोण व स्वकेन्द्रित जीवन हमें अपेक्षाकृत अधिक सभ्य व मूल्य प्रधान जीवन जीने में सहायक नहीं हो सकता है।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में देखें तो हम पाते हैं कि औद्योगिक क्रान्ति के बाद शिक्षकों के अमानवीयकरण की प्रक्रिया चली है शिक्षकों की भूमिका एक सम्मानित क्लर्क की भांति पूर्व और पूर्ण रूप से निर्धारित ज्ञान की व्याख्या करना ही रह गया है। शिक्षकों के यंत्रिकीकरण के फलस्वरूप बालक सृजन के आनन्द से वंचित रह जाते हैं। वर्तमान समय में केवल गुणवत्ता युक्त शिक्षा ही भारत सहित समूचे विश्व को 21वीं सदी में लाभान्वित कर सकती है, और गुणवत्ता युक्त शिक्षा को मूल्यपरक शिक्षा के क्रियान्वयन से ही प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान समय में मनुष्य को वस्तुगत मूल्यों की क्षणिकता में विश्वास नहीं है व आध्यात्मिकता निरर्थक हो चुकी है। इस दशा से मुक्ति पाने के लिए मूल्यों की शिक्षा प्रदान करना अत्यावश्यक है। मूल्यपरक शिक्षा व्यक्ति के सामाजिक परिवर्तन के विविध रुपों को और उनके निहितार्थों को सक्षम बना सकती है तथा उनकी नैतिक निर्णय क्षमता व मूल्यो के प्रति उनकी प्रतिबद्धता विकसित कर सकती है। मनुष्य के विवेक पर भौतिक पाश्चात्य संस्कृति के आक्रमण के कारण जीवन के पुरातन मूल्यों में हमारी आस्था समाप्त सी हो गई है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि व्यक्ति वर्तमान संघर्षपूर्ण वातावरण में अपने अस्तित्व को पहचानने में समर्थ हो सके। जॉन पाल सॉत्र के अस्तित्ववाद के अनुसार मानव स्वतन्त्र रहकर अपने जीवन को जीवन्त रखना चाहता है। जब तक आर्थिक जीवन का प्रवेश द्वार मानी जाने वाली शिक्षा को मूल्यों का सम्बल नहीं मिलेगा तब तक सम्पूर्ण औपचारिक शिक्षा प्रक्रिया, विशेष रुप से रोजगारपरक शिक्षा, ढ़ोंग सदृश ही रहेगी। उच्चत्तम शिक्षा पाने व धार्मिक संस्कारों के उपरान्त भी व्यक्ति सभ्यता के बजाय विविध प्रकार से डसने की कलाएँ सीख रहा है। अनेक लोग सदा इसी कयास में लगे रहते हैं कि कब दूसरों को मात दी जाए और कब अपने लोभ के लिए दूसरे के हितों की बलि चढ़ाई जाए या उनके बनते हुए काम बिगाड़े जाएँ।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त ने कहा है, कभी-कभी हम पशुओं से भी निम्न स्तर का जीवन जीते हैं व यह भूल जाते हैं कि मानवीय गुणो से रहित मनुष्य पतित होता है। सामाजिक ससंजन व प्रगति के लिए मानवीय मूल्यों की प्रतिष्ठा करनी बहुत आवश्यक है। राष्ट्र के निर्माण में शिक्षा के योगदान को नजरन्दाज करना सम्भव नही है। हमें शोषण मुक्त, धर्मनिरपेक्ष तथा स्वतन्त्रता समानता व भ्रातृत्व पर आधारित समाज की रचना करनी है जिसमें नागरिकों की प्रजातान्त्रिक आदर्शों में आस्था हो। इसके लिए विद्यार्थी में मूल्यों का सृजन करना अवश्यम्भावी हो गया है। मूल्य पुस्तको द्वारा नहीं सिखाये जाते अपितु अध्यापकों, माता-पिता, पड़ोसियों, मित्रों एवं समाज के अन्य लोगों के दैनिक जीवन द्वारा विद्यार्थियो में इनका निर्माण किया जाता है। अतः हमें जीवन के प्रत्येक क्षण में इनके प्रति सचेत रहना चाहिए। किसी समय भारत आध्यात्मिकता का खजाना था किन्तु आज सांसारिक एवं क्षणिक भोगों की भूमि बनकर रह गया है। सांसारिक शिक्षा का सम्बन्ध मस्तिष्क से होता है जो क्षणभंगुर होती है जबकि आध्यात्मिक शिक्षा का सम्बन्ध हृदय से होता है और इससे करूणा, सत्य, सहिष्णुता तथा प्रेम जैसे पवित्र गुणों का उद्भव होता है। इस प्रकार एक सार्थक प्रयास करते हुए हमारे भीतर के नैतिक एवं मूल्यपरक धागे को मजबूत करना आवश्यक है जिससे सहजानुभूति जागृत हो सके और जीवन के विविध पहलुओं में वस्तुनिष्ठता आए। इसकी सच्ची परीक्षा ये है कि यह जानने का प्रयास किया जाए कि इन सबसे आन्तरिक परिवर्तन हुआ भी है या नहीं अथवा ये जानकारियाँ केवल एक निरूपयोगी बहस के ही काम आती हैं। हमें हृदय एवं मस्तिष्क से सम्बन्धित छात्र की संपूर्ण क्षमता के उपयोग को दृष्टिगत रखते हुए ऐसा पाठ्यक्रम तैयार करना चाहिए कि उसे सत्य की समझ हो जाए। मन की शान्ति पाने के लिए हमें निम्नतर मन से उठने वाली भावनाओं के उफानों को बुद्धि के माध्यम से रोकना होगा, क्योंकि भावना एक तरंग के समान है जिसमें एक निश्चित क्रम से उतार-चढ़ाव आते हैं और जब तक मन सांसारिक वस्तुओं में रमा रहेगा तब तक हम सुख-दुःख, आनन्द और कष्ट, उत्फुल्लता और नैराश्य के भंवर में फंसते रहेगें। हमारा प्रयास होना चाहिए कि हम भावुकतापूर्ण उफानों की तरंगों के शिखर और तल तब तक घटाते जाएं जब तक कि तरंग का अस्तित्त्व शून्य न हो जाए और सतह शांत न हो जाए। जब हम अपने विचार, वचन और कर्म को शुद्ध प्रेम से भर देते हैं और बातचीत व व्यवहार में सहजता ले आते हैं तब हमें मन एवं इन्द्रियों के शासन से मुक्ति मिल जाती है। जैसे यदि प्रेम सभी मानवीय मूल्यों की अन्तर्धारा है तो अहिंसा उसकी सम्पूरक है व सभी मानवीय मूल्यो की परिणति भी है। जब सभी मूल्यों का उस एक मूल्य में विलय हो जाता है तब इस एकता की समझ और दृष्टि के आधार की समझ अहिंसा के मूल्य की ओर ले जाती है।

कोई भी आस्थामूलक मानवीय पहल व्यक्ति में एक नया दृढ़ विश्वास पैदा करती है जिससे व्यक्ति सक्रिय भागीदारी के लिए प्रोत्साहित होते हैं। अतः वर्तमान परिदृश्य में शिक्षा को व्यावहारिक बनाने के साथ ही मूल्यों का ऐसा आधार प्रदान करना होगा जो शिक्षा को मूल्योन्मुख स्वरूप प्रदान करे और विद्यार्थियों को इस प्रकार विकसित करने में सक्षम हो कि उनके मानस को गुलाम बनाने के बजाय उनमें आत्मविश्वास का संचार कर सके।

निष्कार्ष

विभिन्न शिक्षा शास्त्रियों दार्शनिको एवं महापुरुषों ने शिक्षा का जो विशद् वर्णन किया है उसके आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि वास्तविक शिक्षा वह है जो मनुष्य के सर्वांगीण विकास में सहायक हो। मनुष्य के अन्दर सद्गुणों करके उसे पूर्ण मनुष्य बनाये उसके अन्दर की सभी आन्तरिक शक्तियों का पूर्ण विकास कर सके जिसके आधार पर वह वैयक्तिक पारिवारकि सामाजिक आर्थिक राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर उन्नति करते हुए समस्त समस्याओं का निराकरण कर सके। आत्मा का पूर्ण विकास करके मानव जवन का परम लक्ष्य मोक्ष प्राप्त कर सके एवं सुरदुर्लभ मानव जीवन को सार्थक बना सके। यह हमें मूल्य परक शिक्षा से ही प्राप्त हो सकता है इसके लिए हमें पुरातन वैदिक गुरुकुल परम्परा की शिक्षा के साथ साथ आधुनिक शिक्षा का भी सहारा लेना चाहिए जिससे हमारा एवं सम्पूर्ण विश्व का सर्वांगीण विकास हो सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

आचार्य, पं. श्रीराम शर्मा (2007). वाङ्मय 200 शिक्षा एवं विद्या, युग निर्माण योजना मथुरा, पृ. 5.2

बतरा, दीनानाथ (1993). शिक्षा में जीवन मूल्य क्यों, कैसे? आलोक, शिशु शिक्षा समिति प0उ0प्र0, नेहरू नगर, गाजियाबाद।

माथुर, एस. (2008). शिक्षा के दार्शनिक तथा सामाजिक आधार, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ. 232-233 एवं 269

मुखर्जी, सुनीति (2001). श्री अरविन्द का शिक्षा दर्शन, रामकृष्ण प्रकाशन, वृन्दावन (मथुरा), पृ. 43

चौब, सरयू प्रसाद, एवं चौबे, अखिलेश्वर (2007). शिक्षा के दार्शनिक सामाजिक आधार, इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस मेरठ (उ.प्र.), पृ. 95-156

गेन्ग्रेड, के0 डी0(2000). वैल्यू डिलेमाज ऑफ कन्टमप्रेरी इण्डियाः ए चैलेन्ज टू एजुकेशनिष्ट, प्रोफेशनल कम्पीटेन्सी इन हायर एजुकेशन, देहली।

लाल, रमन बिहारी (2008). शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, पृ. 515।

नायर, के0 आर0 रामचन्द्रन (1986): इनकलेकटिंग राइट वैल्यूज इन चिल्ड्रन, हिन्दू, 6 अक्टूबर।

वर्मा, गूजरमल (1993). जीवन मूल्यों की शिक्षा व्यवस्था कैसी हो। आलोक, शिशु शिक्षा समिति प0उ0प्र0, नेहरू नगर, गाजियाबाद।

वर्मा, सुरेन्द्र (1996): भारतीय जीवन मूल्य, पार्श्वनाथ विद्यापीठ वाराणसी।

पाण्डे, लालजी देव (1993). नैतिक शिक्षा: जीवन के लिए आवश्यक, आलोक, शिशु शिक्षा समिति प0उ0प्र0, नेहरू नगर, गाजियाबाद।

पाण्डेय, रामशक्ल (2008). शिक्षा कही दार्शनिक एवं समान्यशास्त्रीय पृष्ठभूमि, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, पृ. 218

पाठक एवं त्यागी (2008). शिक्षा के दार्शनिक सिद्धान्त, विनोद पुस्तक मन्दिर आगरा-2, पृ. 180- 240

पण्ड्या डॉ. प्रणव (अगस्त, 2009). अखण्ड ज्योति, अखण्ड, ज्योति संस्था घीयामण्डी मथुरा, पृ. 27

राव, भीष्मदत्त (1993). धर्माधारित शिक्षा, आलोक, शिशु शिक्षा समिति प0उ0प्र0, नेहरू नगर, गाजियाबाद।